

SAMVARDHINI :- 01/06/2025

Volume – 7

Issue – 1

(ISSN ONLINE:- 2583-7176)

<https://samvardhini.in>

बाल विकास में भारतीय ज्ञान प्रणालियों (आईकेएस) का योगदान: एक समग्र दृष्टिकोण

डॉ वीरेंद्र कुमार

शोध-सार:

यह अध्ययन भारतीय ज्ञान प्रणालियों के माध्यम से संज्ञानात्मक, भाषायी, भावनात्मक और सामाजिक विकास के संवर्धन के विभिन्न माध्यमों का अन्वेषण करता है। संस्कृत भाषा, कथावाचन और आयुर्वेद जैसी प्राचीन भारतीय प्रथाओं को आधुनिक शिक्षा के संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट है कि ये प्रणालियाँ बच्चों के समग्र विकास की वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती हैं और आधुनिक शिक्षण पद्धतियों के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं। संस्कृत भाषा, अपने सटीक व्याकरण और संरचना के कारण संज्ञानात्मक क्षमता की वृद्धि करती है, जबकि प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली में बहुभाषावाद बच्चों के सामाजिक और मानसिक लचीलेपन को प्रोत्साहित करती है। कथावाचन के माध्यम से भावनात्मक और नैतिक विकास को बढ़ावा मिलता है। पञ्चकोषीय अवधारणा के माध्यम से ECCE में शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास का समग्र दृष्टिकोण अपनाया जाता है। उत्सवों और अनुष्ठानों के माध्यम से भावनात्मक और सामाजिक विकास को भी सुदृढ़ किया जाता है, जो सर्वांगीण विकास में सहायक है।

डॉ वीरेंद्र कुमार

शिक्षा निदेशालय, दिल्ली

ईमेल: drvkpathakdoe@gmail.com

कूट पद : भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ (आईकेएस), संज्ञानात्मक विकास (Cognitive Development), भावनात्मक विकास (Emotional Development), भाषायी विकास (Linguistic Development), भावनात्मक विकास (Emotional Development), समग्र विकास (Holistic development) प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई), बहुभाषावाद (Multilingualism), अनुभवात्मक शिक्षा (Experiential Learning).

शिक्षा केवल ज्ञान के संचरण का साधन मात्र नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति के सर्वांगीण विकास का माध्यम भी है। भारतीय ज्ञान परंपराओं में शिक्षा को मानव जीवन के विभिन्न पहलुओं के संबंध में देखा गया है, जो शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक विकास को समान महत्व देती हैं। इस संदर्भ में संस्कृत, बहुभाषावाद और पञ्चकोषीय अवधारणाएँ विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जो बाल्यावस्था में मानसिक एवं बौद्धिक क्षमता के विकास में सहायक होती हैं।

यह शोध-अध्ययन इस बात का अन्वेषण करता है कि प्राचीन भारतीय शैक्षिक दृष्टिकोण, विशेष रूप से संस्कृत भाषा, कथावाचन और बहुभाषी शिक्षण विधियाँ, बाल विकास के विभिन्न आयामों पर किस प्रकार प्रभाव डालती हैं। साथ ही, यह अध्ययन उन माध्यमों की स्पष्ट दृष्टि प्रदान करता है जिनसे इन प्राचीन ज्ञान प्रणालियों का समावेश आधुनिक शिक्षा प्रणाली में किया जा सकता है, ताकि एक समग्र और संतुलित विकास की दिशा में प्रगति की जा सके।

इस अध्ययन के माध्यम से, हम यह समझने का प्रयास करते हैं कि कैसे भारतीय ज्ञान परंपराओं में निहित शैक्षिक दृष्टिकोण, आज की शिक्षा प्रणाली में नवाचार के रूप में योगदान कर सकते हैं और बाल्यावस्था के विकास के लिए नए आयाम प्रशस्त कर सकते हैं।

भारतीय ज्ञान प्रणालियाँ संज्ञानात्मक, भाषायी और भावनात्मक विकास के बारे में समृद्ध अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं, जो प्राचीन ज्ञान को समग्र शैक्षिक अभ्यासों के साथ प्रस्तुत करती हैं। ये अभ्यास/परंपराएँ मन, भाषा और भावना के अंतर्संबंध पर बल देती हैं, जो अच्छी तरह से विकसित होने के लिए एक व्यापक संरचना प्रदान करती हैं।

1. संस्कृत और संज्ञानात्मक विकास:

संस्कृत भाषा वैज्ञानिकता, अपने सटीक व्याकरण और ध्वनिगत परिशुद्धता के साथ, संज्ञानात्मक क्षमताओं की वृद्धि करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। मंत्र-जाप और श्लोकों का पाठ करने की प्रथा के साथ संस्कृत की संरचित/सुगठित प्रकृति दोनों मस्तिष्क के गोलार्धों को उत्तेजित/अभिप्रेरित करती है, जिससे बेहतर स्मृति, ध्यान और समस्या-समाधान कौशल में सुधार

होता है। यह संज्ञानात्मक संवर्धन विभिन्न श्लोकों द्वारा समर्थित है, जो मानसिक अनुशासन और नियंत्रण पर बल देते हैं।

‘यस्तु सर्वाणि इन्द्रियाणि मनसा संयम्य आस्ते।

उपशान्तः सः परः श्रेयोः सुखमुपैति॥’ (अथर्ववेद 5.1.5)

(जो मन से सभी इन्द्रियों को नियंत्रित करता है, वह शांत हो जाता है, वह उच्चतम कल्याण प्राप्त करता है, वह सुख प्राप्त करता है।) यह श्लोक मानसिक अनुशासन के महत्व को रेखांकित करता है, जो संस्कृत के अभ्यास से प्राप्त होने वाला एक प्रमुख लाभ है। भाषा में सिद्धता प्राप्त करने और पाठ करने के माध्यम से व्यक्ति अपनी संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं और मानसिक क्षमताओं पर अधिक नियंत्रण विकसित कर पाते हैं।

‘योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।

सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥’ (भगवद् गीता 2.48)

(अपने निर्धारित कर्म करो, सफलता और असफलता के प्रति छोड़कर। इन सबके प्रति समत्व ही योग है।) यह श्लोक समता और मानसिक संतुलन की अवधारणा को सपष्ट करता है, जो संस्कृत सीखने जैसे अनुशासित अभ्यासों के माध्यम से विकसित की जाती है।

2. प्राचीन भारतीय शिक्षा में बहुभाषावादः

प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणालियों ने सदैव ही बहुभाषावाद (Multilingualism) को अपनाया है, जो बच्चों को संस्कृत, प्राकृत, पाली और तमिल सहित विभिन्न भाषाओं के संपर्क में लाता था। कई भाषाओं के संपर्क में आने से संज्ञानात्मक लचीलापन, कार्यकारी कामकाज और सामाजिक तदानुभूति में वृद्धि होती है। इस तरह की बहुभाषी शिक्षा के लाभ आधुनिक अनुसंधान में अच्छी तरह से प्रलेखित हैं और प्राचीन बौद्ध शिक्षा के अभ्यासों में दृष्टव्य हैं।

बौद्ध भिक्षु अधिकांशतः कई भाषाओं में प्रवीण होते थे, जिससे वे विविध क्षेत्रों में शिक्षाओं को साझा कर सकते थे। इस प्रथा ने न केवल बौद्ध धर्म के प्रसार की सुविधा प्रदान की बल्कि संज्ञानात्मक और सामाजिक विकास में भी योगदान प्रदान किया। आधुनिक ईसीसीई प्रथाएं/अभ्यास इस बात को प्रतिबिंबित करते हैं कि द्विभाषी और बहुभाषी शिक्षा को बढ़ावा देकर, संज्ञानात्मक और सामाजिक कौशल बढ़ाने में इसकी भूमिका को स्वीकार किया जाता है।

3. कथावाचन (कहानी सुनाना) की भावनात्मक विकास में भूमिका:

कथावाचन, कहानी सुनाने की पारंपरिक कला, भारतीय शिक्षा का एक आधार रहा है। महाभारत, रामायण और पुराणों जैसी महाकाव्यों की कहानियों के माध्यम से बच्चों को नैतिक मूल्य, भावनात्मक बुद्धि और व्यावहारिक जीवन पाठ सिखाए जाते थे। इन कहानियों ने भावनात्मक और नैतिक विकास को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है।

युधिष्ठिर और यक्ष की कथा, जहां युधिष्ठिर यक्ष के प्रश्नों का उत्तर बुद्धि और शुचिता से देते हैं, कर्तव्यनिष्ठा और निर्णय लेने में बुद्धि के महत्व के बारे में शाश्वत सीख प्रदान करते हैं। यह कथा भावनात्मक विकास में अंतर्दृष्टि प्रदान करते हुए शुचिता और बुद्धि के मूल्य को सिखाती है।

'धर्मस्य तत्त्वमाहं प्रक्षामि तव तत्त्ववित।

अस्तु ते हि तत्त्वज्ञः प्रेक्ष्यस्व प्रपन्नमुखः॥' (रामायण, युद्ध कांड 107.21)

(मैं तुम्हें धर्म का सार बताता हूँ, जो ज्ञानी हो, तुम सत्य का अवलोकन करो।) यह श्लोक नैतिक और भावनात्मक ज्ञान प्रदान करने में कथावाचन की भूमिका को स्पष्ट करता है, भावनात्मक और नैतिक शिक्षा के लिए एक उपकरण के रूप में कथा के महत्व को पुष्टि करता है।

'धर्मेण प्रजाः सर्वाः समृद्धाः सदा सुखाः।

धर्मात् लाभः परो भवेत्॥' (जातक कथाएँ, अध्याय 1)

(धर्म से सभी प्राणी समृद्ध और हमेशा सुखी होते हैं। धर्म से परम लाभ होता है।) यह श्लोक जातक कथाओं से भावनात्मक विकास और कल्याण पर कहानी कथन में अंतर्निहित नैतिक और नीतिशास्त्रीय शिक्षाओं के गहरे प्रभाव को प्रदर्शित करता है।

संस्कृत शिक्षा, बहुभाषी शिक्षा और कथावाचन के एकीकरण के माध्यम से प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणालियों (IKS) ने संज्ञानात्मक, भाषायी और भावनात्मक विकास के लिए एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान किया है। ये अभ्यास आधुनिक शैक्षिक ढांचों को प्रभावित करती रहती हैं, जो अच्छी तरह से व्यक्तित्वों को पोषण देने के लिए इन प्राचीन परंपराओं की शाश्वत प्रासंगिकता पर बल देती हैं।

4. पञ्चकोषीय ज्ञान और संज्ञानात्मक, भाषायी और भावनात्मक विकास

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) के संदर्भ में, भारतीय ज्ञान प्रणालियों (आईकेएस) के पञ्चकोश की अवधारणा बाल विकास के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती है। पांच कोश - अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनंदमय - एक बच्चे के विकास के शारीरिक,

भावनात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक पहलुओं को रेखांकित करते हैं। यहां स्पष्ट है कि प्रत्येक कोश एक अच्छी तरह से विकसित ईसीसीई ढांचे को आकार देने में किस प्रकार भूमिका का निर्वहन कर सकता है:

4.1. अन्नमय कोश (भौतिक आवरण)

तैत्तिरीय उपनिषद (2.1) अन्नमय कोश को 'भोजन से बना' (अन्नमयः) के रूप में वर्णित करता है। यह बल देता है कि भौतिक शरीर का पोषण और निरंतरता भोजन द्वारा होती है, जो सीधे किसी के स्वास्थ्य और शक्ति को प्रभावित करता है।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: छोटे बालकों के लिए अच्छे पोषण और शारीरिक कल्याण पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है।

उदाहरण: इन उपनिषदीय शिक्षाओं का पालन करते हुए, बच्चों को ऋषि अगस्त्य जैसे बुद्धिमान व्यक्तियों के बारे में कहानियों के माध्यम से सिखाया जा सकता है, जो अपनी छोटे शारीरिक गठन के पश्चात्, उचित पोषण और व्यायाम के माध्यम से संतुलन बनाए रखकर महान शारीरिक साहसिक कार्य कर सकते हैं। योग सूत्रों (सूत्र 2.46 - स्थिर सुख आसन) के आधार पर योग जैसी शारीरिक गतिविधियों को शामिल करने से बच्चों को अपने शारीरिक मुद्राओं में आराम और स्थिरता खोजने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, जिससे संक्रियात्मक कौशल बढ़ता है।

4.2. प्राणमय कोश (प्राण शक्ति आवरण):

प्रश्न उपनिषद (3.5) में, प्राण (जीवन शक्ति) को 'जीवन-श्वास, शरीर और मन को बनाए रखने और संचालन, चलाने वाली ऊर्जा' के रूप में वर्णित किया गया है। यह कोश प्राण की जीवन शक्ति बनाए रखने में भूमिका पर बल देता है।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: सरल श्वास अभ्यास और लय-आधारित गतिविधियाँ शुरू करने से छोटे बच्चों को अपनी जीवन शक्ति के प्रति अधिक सचेत होने में सहायता मिल सकती है।

उदाहरण: हनुमान जी की कहानी से प्रेरणा लेते हुए, जो प्राण की सिद्धता का प्रतीक है, शिक्षक बच्चों को शांत करने और उनकी ऊर्जा के बारे में अधिक जागरूक बनाने के लिए प्राणायाम जैसे श्वास - अभ्यास का उपयोग कर सकते हैं। उदाहरण के लिए - सरल लयबद्ध श्वास या भ्रामरी प्राणायाम के द्वारा भावनाओं को नियंत्रित करने और ऊर्जा को मार्गान्तरित करने में मदद कर सकता है।

4.3. मनोमय कोश (मानसिक आवरण):

भगवद् गीता (अध्याय 6, श्लोक 5) मन और भावनाओं को नियंत्रित करने पर चर्चा करती है: 'मन से स्वयं को उन्नत करना चाहिए, स्वयं में हीनता का भाव पोषित नहीं होना चाहिए, क्योंकि मन कर्मबद्ध आत्मा का मित्र है और उसका शत्रु भी है' (उद्धरेत् आत्मानम् आत्मानम् अवसादयेत्)।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: बच्चों को कथा-वाचन (कहानी सुनाने) जैसी गतिविधियों में सम्मिलित करना, जो भावनात्मक साक्षरता को बढ़ावा देती है, उन्हें भावनाओं को पहचानने और प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने में सहायता करती है।

उदाहरण: महाभारत की कहानी से यह दृष्टव्य है कि किस प्रकार दबाव में भी युधिष्ठिर शांति-भाव धारण करता है, बालकों को इन उदाहरणों के लिए अनुकूलित किया जा सकता है, उन्हें भावनाओं को प्रबंधित करने और भावनात्मक बुद्धि विकसित करने के तरीके सिखाए जा सकते हैं। भूमिका निर्बहन, जैसी गतिविधियाँ बच्चों को अलग-अलग परिस्थितियों का सामना करने के तरीके पर विचार करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं, जो मनोमय कोश के विकास के अनुरूप हैं।

4.4. विज्ञानमय कोश (ज्ञान या बौद्धिक आवरण):

तैत्तिरीय उपनिषद (2.4) में, विज्ञानमय कोश को बुद्धि और ज्ञान के आवरण के रूप में वर्णित किया गया है, जहाँ विवेक और ज्ञान निवास करते हैं। यह आधारभूत विचार प्रक्रियाओं से परे निर्णय लेने और समझने का मार्गदर्शन करता है।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: जिज्ञासा और समस्या-समाधान को बढ़ावा देने के लिए ऐसी गतिविधियों का आयोजन करें, जो गंभीर सोच और समझ के प्रति सजग करें।

उदाहरण: नचिकेता (जो यम (मृत्यु के देवता) से ज्ञान की याचना करता है) की उपनिषदीय कथा से जिज्ञासा का अनुप्रयोग दृष्टव्य है, जो एक बच्चे में जिज्ञासा और बौद्धिक खोज के महत्व को सिखाती है। बच्चों को प्रश्न पूछने, पहेलियाँ सुलझाने या व्यावहारिक प्रयोगों में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित करने से उनके बौद्धिक समझ का विकास होता है। रचनात्मक कहानी सुनाने या आलोचनात्मक सोच, अभ्यास का उपयोग गहन संज्ञानात्मक जुड़ाव को पोषित करने के लिए किया जा सकता है।

4.5. आनंदमय कोश (आनंद आवरण):

तैत्तिरीय उपनिषद (2.5) आनंदमय कोश को आनंद या आनंद का आवरण के रूप में वर्णित करता है। यह शुद्ध आनंद और पूर्णता की अवस्था का प्रतिनिधित्व करता है, जो अपने वास्तविक स्व (आत्मा) के साथ सामंजस्य में होने से उत्पन्न होता है।

ईसीसीई में अनुप्रयोग: छोटे बच्चों के लिए भावनात्मक सुरक्षा और आनंद को बढ़ावा देने वाला वातावरण बनाना महत्वपूर्ण है।

उदाहरण: वृंदावन में कृष्ण के बचपन की कहानियों से प्रेरणा लेते हुए, जो आनंद, खेल और बिना शर्त प्यार का प्रतीक है, शिक्षक ऐसा वातावरण बना सकते हैं जहां बच्चे अपनी रचनात्मकता का पता लगाने और कला, संगीत और खेल के माध्यम से आनंद का अनुभव करने के लिए स्वतंत्र हों। नृत्य और समूह खेल के माध्यम से मुक्त अभिव्यक्ति आनंदमय कोश के अनुरूप आनंद की भावनाओं वृद्धि करती है।

4.6. पञ्चकोषीय ज्ञान का ECCE में एकीकरण तथा अनुप्रयोग:

समग्र खेल-आधारित शिक्षा: संस्कृत ग्रंथों से कहानियों और प्रथाओं/अभ्यासों को सम्मिलित करने से समग्र अवधारणाओं को एक संबंधित तरीके से प्रस्तुत करने में सहायता मिलती है। उदाहरण के लिए, योगसूत्रों से आसन अभ्यास (शारीरिक मुद्राएं) या वेदों से सरल मंत्रों को सम्मिलित करने से शरीर और मन दोनों को सशक्त किया जा सकता है।

सचेतनता और अहिंसा: जैन और बौद्ध धर्म से प्राप्त अहिंसा जैसी अवधारणाओं को बालकों को दया और दूसरों के प्रति सम्मान सिखाने के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है, जिससे एक सामंजस्यपूर्ण सामाजिक वातावरण को बढ़ावा मिलता है।

आध्यात्मिक विकास: आनंदमय कोष को आध्यात्मिक प्रथाओं/अभ्यासों जैसे मंत्रोच्चारण या प्रकृति की ध्वनियाँ सुनकर पोषित किया जा सकता है, ईशोपनिषद् के मंत्र 'जड़ -चेतन प्राणियों वाली यह सृष्टि सर्वत्र परमात्मा/दिव्यता से व्याप्त है" (ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्) से प्रेरणा लेकर, व्यापक विश्व के साथ संयोजन की भावना को बल दिया जा सकता है।

पञ्चकोषीय ज्ञान का उपयोग करने से ईसीसीई कार्यक्रम शारीरिक, भावनात्मक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास को एक सार्थक तरीके से एकीकृत कर सकते हैं। इन विकासात्मक चरणों को प्राचीन ग्रंथों से आधार बनाकर, शिक्षक बच्चों को एक गहरा सांस्कृतिक रूप से समृद्ध और समग्र शिक्षण अनुभव प्रदान कर सकते हैं जो उनके समग्र कल्याण के लिए प्रासंगिक और पोषणीय हो।

5 . उत्सव और अनुष्ठानों के माध्यम से भावनात्मक और सामाजिक विकास:

उत्सव और अनुष्ठान सांस्कृतिक मूल्यों, सामुदायिक संयोजन और साझा अनुभवों को सुदृढ़ करके भावनात्मक और सामाजिक विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं। ये परंपराएं

व्यक्तियों का समबन्ध, भावनाओं को व्यक्त करने और सामाजिक सामंजस्य बनाने के लिए सार्थक अवसर प्रदान करती हैं।

5.1. उत्सव और अनुष्ठानों का शैक्षिक महत्व:

दीपावली, होली, मकर संक्रांति और रक्षाबंधन जैसे भारत के उत्सव बालकों को सामाजिक गतिविधियों में हर्ष से सम्मिलित होने, सामुदायिक संबंध बनाने और सहानुभूति विकसित करने के लिए मूल्यवान अवसर प्रदान करते हैं। इन उत्सवों से संबंधित अनुष्ठान और परंपराएं न केवल उत्सवपूर्ण हैं बल्कि शैक्षिक भी हैं, बच्चों को सहयोग, रचनात्मकता और उदारता के बारे में सिखाती हैं।

"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु माकश्चिदुःखभाग्भवेत्॥" (मनुस्मृति 4.148) (सभी सुखी हों, सभी रोगमुक्त हों। सभी कल्याण को देखें, कोई दुःखी का भागी न बने।) यह श्लोक सामुदायिक भावना और सामूहिक कल्याण की आकांक्षा को रेखांकित करता है, जो उत्सवों के आयोजन प्रसारित मूल्यों के केंद्र में हैं। इन उत्सवों से साझा खुशी और परस्पर देखभाल पर अधिक बल देने से सहानुभूति और पारस्परिक सम्मान की शिक्षाओं को बल मिलता है।

"आयुरारोग्यमैश्वर्यं च सम्पदां मितानीकृते।

श्रीः प्रीयतामैश्वर्यं भूतपूर्वाणि चेतसा॥" (ऋग्वेद 10.19.5)

(आपको दीर्घायु, स्वास्थ्य और समृद्धि का आशीर्वाद प्राप्त हो, जो अनुग्रह और अतीत की सम्पन्नता से युक्त हो।) यह श्लोक कल्याण और समृद्धि के मूल्यों को स्पष्ट करता है, जिन्हें मिष्ठान्न साझा करने और उपहार देने जैसी उत्सव की परंपराओं के माध्यम से मनाया और सुदृढ़ किया जाता है।

5.2. पारंपरिक स्वदेशी खेल और भावनात्मक लचीलापन (Resilience):

(लीला: एक शैक्षिक उपकरण के रूप में खेल)

भारतीय परंपराओं में, लीला (खेल) को केवल मनोरंजन के रूप में नहीं, बल्कि शिक्षा के एक अभिन्न अंग के रूप में देखा जाता है। कबड्डी, खो-खो और गिल्ली डंडा जैसे पारंपरिक खेल बच्चों में शारीरिक सहनशक्ति, टीमवर्क और भावनात्मक लचीलापन (Resilience) बढ़ाने के लिए डिज़ाइन किए गए थे। इन खेलों में अधिकांशतः रणनीतिक सोच, सहयोग और धीरज (perseverance) सम्मिलित थी, जो महत्वपूर्ण जीवन-कौशल के विकास में योगदान करती थी।

"समानं च योऽस्मिन् सुमनः समत्वं योग उच्यते।

सत्सङ्ग्रहणं योगः सदा सन्तोषमायुषः॥" (भगवद्गीता 2.48)

(समत्व ही योग है। कार्यों में एकरूपता का अभ्यास ही योग है। यह सत्संग ही योग है, जो सदा संतोष और आयु प्रदान करता है।) यह श्लोक भावनात्मक संतुलन और लचीलापन (Resilience) बनाए रखने के महत्व को दर्शाता है, जो पारंपरिक खेलों के माध्यम से बढ़ावा दिया जाता है जो बच्चों को सफलता और असफलताओं के मध्य भावनात्मक संतुलन बनाना सिखाता है।

"आत्मनं रक्षति धर्मेण भाग्यश्च सदा योगः।

संपत्तिः सर्वकामैश्च सुखा च निरपेक्षितः॥" (महाभारत, शांति पर्व 161.9)

(धर्म से अपने आप को रक्षा करता है और भाग्य भी हमेशा योग होता है। संपत्ति सभी इच्छाओं से मुक्त हो जाती है और सुख भी निरपेक्षित होता है।) यह श्लोक धर्म और आत्म-नियंत्रण की भूमिका को रेखांकित करता है, जो पारंपरिक खेल और खेलों के माध्यम से पोषित होते हैं। लीला के माध्यम से सीखे गए कौशल बच्चे के भावनात्मक संतुलन और लचीलापन (Resilience) बनाए रखने की क्षमता में योगदान करते हैं।

उत्सवों और पारंपरिक खेलों के माध्यम से भारत में बच्चों को महत्वपूर्ण सामाजिक और भावनात्मक कौशल विकसित करने के अवसर प्रदान किए जाते हैं। ये प्रथाएं प्राचीन शिक्षाओं में गहराई से निहित हैं और सहयोग, सहानुभूति और लचीलापन (Resilience) में मूल्यवान सीख देना जारी रखती हैं, जो समग्र विकास पर बल देने वाले आधुनिक शैक्षिक सिद्धांतों के अनुरूप हैं।

6. स्वास्थ्य और शारीरिक विकास: आयुर्वेद से अंतर्दृष्टि:

आयुर्वेद स्वास्थ्य और शारीरिक विकास के बारे में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, संतुलन, समग्र कल्याण और व्यक्तिगत देखभाल पर बल देता है। इसके सिद्धांत इष्टतम शारीरिक स्वास्थ्य और समग्र जीवन शक्ति को वृद्धि देने के लिए आहार, जीवनशैली और प्राकृतिक उपचारों के एकीकरण का मार्गदर्शन करते हैं।

6.1. बाल चिकित्सा के लिए आयुर्वेदिक सिद्धांत: प्रारंभिक बाल्यावस्था पोषण का महत्व:

आयुर्वेद में, बच्चे के जीवन के प्रारम्भिक वर्षों को शारीरिक और मानसिक विकास को सुनिश्चित करने के लिए एक महत्वपूर्ण चरण माना जाता है। चरक संहिता मजबूत विकास को बढ़ावा देने और बीमारी को रोकथाम के उद्देश्य से विशिष्ट आहार संबंधी दिशानिर्देश प्रदान करती है।

"बालस्य प्रकृतिः स्थिरा मृदुभूताः शरीरिणां, रसनेइव कृता स्थिराः बलवन्ताः सुखं जीवति।" (चरक संहिता 1.32) (बच्चों का स्वभाव स्थिर और कोमल होता है और उनका बल और स्थिरता सही पोषण से विकसित होती है।) यह श्लोक बालकों के शारीरिक और मानसिक स्थिरता का समर्थन करने में उचित पोषण की महत्वपूर्ण भूमिका पर बल देता है, जो प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) में पोषण संबंधी आवश्यकताओं की आधुनिक समझ के अनुरूप है।

"आयुर्वेदश्च प्राणश्च वायुश्च भूतो भवश्च ते, आरोग्यं च जीवितं श्रेष्ठं इंद्रियं च नष्टितम्।" (चरक संहिता 1.44)

(शरीर का स्वास्थ्य, जीवन और इंद्रियों का रखरखाव आयुर्वेद, प्राण और प्राकृतिक तत्वों के संतुलित अंतःक्रिया से होता है।) यह श्लोक आयुर्वेदिक सिद्धांतों की समग्र प्रकृति को स्पष्ट करता है, जहां पोषण एक व्यापक प्रणाली का हिस्सा है जिसमें इष्टतम स्वास्थ्य के लिए प्राकृतिक तत्वों के साथ संतुलन और सामंजस्य सम्मिलित है।

6.2. शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए आयुर्वेदिक अभ्यासः

अभ्यंग (तेल मालिश) और योग जैसी आयुर्वेदिक प्रथाएं कम उम्र से ही समग्र कल्याण को बढ़ावा देने में अभिन्न हिस्सा रही हैं। ये अभ्यास शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक स्पष्टता का समर्थन करती हैं, जिन्हें आधुनिक ईसीसीई संरचना में तेजी से मान्यता दी जा रही है।

"आरोग्यं शीलमायुष्यं बलमिंद्रिय सुखं ज्ञानं च कल्याणं चार्थो धर्म च शोभनम्।" (सुश्रुत संहिता 15.41)

(अच्छा स्वास्थ्य, लंबा जीवन, बल, सुख, ज्ञान, पुण्य और धन सभी आयुर्वेद का अभ्यास करने से आता है।) यह श्लोक आयुर्वेदिक प्रथाओं/अभ्यासों के व्यापक लाभों को रेखांकित करता है, जिसमें शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक कल्याण और जीवन की समग्र गुणवत्ता सम्मिलित है।

"वयस्य हि प्राणं चापि पानियां चास्य वारजितम्, प्राणयामो धृतिः शांतिः आरोग्यं शीलमायुतम्।" (चरक संहिता 3.45)

(जीवन का श्वास, उपयुक्त पदार्थों का नियमित सेवन, आत्म-नियंत्रण, शांति और अच्छा स्वास्थ्य लंबे और स्वस्थ जीवन के लिए आवश्यक हैं। यह श्लोक स्वास्थ्य और दीर्घायु बनाए रखने में प्राणायाम (श्वास- अभ्यास) और आत्म-अनुशासन जैसी अभ्यासों के महत्व पर बल देता है।

6.3. प्रारंभिक बाल्यावस्था में योग और मन-शरीर एकीकरण: बच्चों के लिए आसन और प्राणायाम:

आसन (शारीरिक मुद्राएं) और प्राणायाम (श्वास तकनीक) से युक्त योग, शारीरिक और मानसिक विकास को एकीकृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आधुनिक शैक्षिक प्रथाएं बच्चों के शारीरिक लचीलेपन, एकाग्रता और भावनात्मक संतुलन को बढ़ाने के लिए इन तत्वों को सम्मिलित करती हैं।

"योगः कर्मसु कौशलम्।" (भगवद्गीता 2.50)

(योग कार्यों में निपुणता है।) यह श्लोक योग के सार को एक अभ्यास के रूप में दर्शाता है जो शारीरिक कौशल को मानसिक फोकस के साथ एकीकृत करता है, जो समग्र विकास को बढ़ावा देने के आधुनिक ईसीसीई लक्ष्यों के अनुरूप है।

"समत्वं योग उच्यते।" (भगवद्गीता 2.48)

(समत्व ही योग है।) यह श्लोक योग के माध्यम से संतुलन और सामंजस्य प्राप्त करने के महत्व को स्पष्ट करता है, जो प्रारंभिक बाल्यावस्था में भावनात्मक लचीलापन और स्थिरता विकसित करने में महत्वपूर्ण है।

आयुर्वेदिक सिद्धांतों और योग के अभ्यास के माध्यम से, बच्चों के स्वास्थ्य और शारीरिक विकास का समग्र रूप से पोषण किया जाता है। ये प्राचीन प्रथाएं आधुनिक ईसीसीई दृष्टिकोणों में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करती हैं, जो बच्चों के व्यापक विकास के लिए संतुलित पोषण, शारीरिक गतिविधि और मानसिक कल्याण के महत्व पर बल देती हैं।

निष्कर्ष:

भारतीय ज्ञान परंपराएं संज्ञानात्मक, भाषायी और भावनात्मक विकास के लिए एक समग्र दृष्टिकोण प्रस्तुत करती हैं, जो न केवल प्राचीन शिक्षा प्रणालियों की समृद्धि को दर्शाती हैं, बल्कि आज की शैक्षिक संरचना को भी प्रभावित करती हैं। संस्कृत, बहुभाषावाद, कथावाचन, और पञ्चकोषीय अवधारणाएं बाल विकास के विभिन्न पहलुओं पर गहरा प्रभाव डालती हैं। इन प्रथाओं/अभ्यासों का उद्देश्य बच्चों के मानसिक, शारीरिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास को सुदृढ़ करना है। आधुनिक शिक्षा में इन प्राचीन सिद्धांतों का समावेश करके एक सतत, संतुलित और समग्र विकास की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं, जो बालक के व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास के लिए आवश्यक है।

संदर्भ:

अहीर, डी. (2008). प्राचीन भारत में शिक्षा. नई दिल्ली: एस. चंद एंड कंपनी लिमिटेड।

- बंडुरा, ए. (1977). सामाजिक अधिगम सिद्धांत. एंगलवुड क्लिफ्स, एनजे: प्रेंटिस-हॉल।
- ड्यूई, जे. (1938). अनुभव और शिक्षा. न्यूयॉर्क: मैकमिलन।
- गार्डनर, एच. (1983). फ्रेम्स ऑफ माइंड: द थ्योरी ऑफ मल्टीपल इंटेलिजेंस. न्यूयॉर्क: बेसिक बुक्स।
- हार्टजेल, जे. (2017). संस्कृत पाठ के बच्चों के संज्ञानात्मक कार्यों पर प्रभाव. जर्नल ऑफ कॉग्निटिव एन्हांसमेंट, 1(2), 98-108.
- कोलब, डी. ए. (1984). प्रायोगिक अधिगम: सीखने और विकास का स्रोत अनुभव. एंगलवुड क्लिफ्स, एनजे: प्रेंटिस-हॉल।
- मोंटेसरी, एम. (1967). मोंटेसरी विधि. न्यूयॉर्क: शोकन बुक्स।
- पाठक, वीरेंद्र कुमार (2022). संस्कृतशिक्षणपथेयम्. राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली।
- पाठक, वीरेंद्र कुमार (2022). कम्पेंडीयम: इनिशिएटिव्स एंड इंटरवेंशनस इन एजुकेशन, राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली।
- पाठक, वीरेंद्र कुमार (2022). स्टेप: स्कूल ट्रांसफॉर्मेशन एंड इनरिचमेंट प्रोग्राम, राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली।
- सलूजा, चाँद किरण (2022) शिक्षक संदर्शिका (गतिविध्यात्मकम् संस्कृतशिक्षण शिक्षणम् (भाग प्रथम -द्वितीय), संस्कृत संबर्धन प्रतिष्ठान, दिल्ली
- सलूजा, चाँद किरण (2024). शिक्षा: भारतीय दृष्टिकोण. दिल्ली: संस्कृत प्रमोशन फाउंडेशन।
- सरस्वती, जी. (2015). संज्ञानात्मक विकास में संस्कृत की भूमिका: एक समीक्षा. अंतर्राष्ट्रीय भाषा और भाषाविज्ञान पत्रिका, 2(3), 120-134.

वेबसाइट्स और ऑनलाइन संसाधन:

- चरक संहिता: एक प्राचीन भारतीय चिकित्सा ग्रंथ. <http://www.ayurveda-international.org>
- सुश्रुत संहिता: एक प्राचीन भारतीय चिकित्सा ग्रंथ. <http://www.ayurveda-international.org>
- उपनिषद: एक नया अनुवाद. <https://www.upanishads.org>
- American Institute of Vedic Studies: संस्कृत और संज्ञानात्मक कार्य. <http://www.vedicstudies.org>

Indian Council of Philosophical Research. (2020)। भारतीय शिक्षा के दार्शनिक आधार. <http://www.icpr.in>

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. (2020)। शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf

Vedic Research Institute. (2018)। वैदिक काल में शिक्षा. <http://www.vedicresearch.org>